ISSN No. 2349-4654
नाद – नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूजिक
वर्ष : 1, अंक : 1, नवम्बर 2014

# समाज संगीत के प्रादुर्भावक श्री हितहरिवंश

**प्रो. शर्मिला टेलर**
*वनस्थली विद्यापीठ, संगीत विभाग, वनस्थली (राजस्थान)*

**ऋचा उपाध्याय**
*शोधार्थी संगीत विभाग, वनस्थली विद्यापीठ, राजस्थान*

## सार-संक्षेप

*कृष्ण भक्तिधारा के सम्प्रदायों में 'राधावल्लभ सम्प्रदाय' अपना अलग व श्रेष्ठ स्थान रखता है। राधावल्लभ सम्प्रदाय शुद्ध रसमार्गीय भक्ति सम्प्रदाय है। इसमें हित हरिवंश जी ने श्री राधाकृष्ण के युगल स्वरूप की अनुभूति की है, परन्तु प्रकट स्वरूप में ''श्री राधा'' नाम की सर्वोपरिता स्वीकारी है क्योंकि श्री प्रियतम श्री प्रिया जू(जी) के प्रेमाधीन है। राधावल्लभ सम्प्रदाय में समाज गायन भक्ति का प्रमुख साधन है। 'समाज' का अर्थ 'समूह' और 'समाज गान' से तात्पर्य 'सामूहिक गान' से है। 'समाज गान' में मुख्य रूप से एक मुखिया, एक झेला, एक पखावज वादक तथा अन्य वाद्य यन्त्रों पर तथा बैठे हुए साथ गाने वाले भक्तगण होते हैं। इस सम्प्रदाय में समाज गान की पद्धति चित्ताकर्षक स्वरों में महानुभावों द्वारा निर्धारित की गई है। जिनमें से कुछ पद मिश्रित रागों में व कुछ शुद्ध रागों में गाये जाते हैं। इस सम्प्रदाय में समाजगान पद्धति के माध्यम से ही नित्य सेवा तथा नैमित्तिक सेवा का विधान है। इसमें आधुनिक संगीत को प्रवेश नहीं दिया गया है। इस शोध प्रपत्र के माध्यम से मेरा यह प्रयास है कि मैं 'राधावल्लभ सम्प्रदाय के संगीत' पर प्रकाश डाल सकूं।*

## शोध-पत्र

वैष्णव भक्ति संप्रदायों की परम्परा में राधावल्लभ सम्प्रदाय का अपना एक अलग विशिष्ट स्थान है। ''सोलहवीं शताब्दी में 'गोस्वामी श्री हितहरिवंश चन्दऊ' जी द्वारा 'राधावल्लभ सम्प्रदाय' का प्रवर्तन हुआ।''[1] ''सोलहवीं शताब्दी में वैष्णव कहलाने के लिए प्रस्थानत्रयी (उपनिषद, गीता, ब्रह्मसूत्र)पर साम्प्रदायिक दृष्टि से भाष्य रचना करना अनिवार्य माना जाता था। बिना भाष्य रचना किये किसी को भी नवीन सम्प्रदाय की स्थापना करने की अनुमति प्राप्त नहीं थी। हितहरिवंश जी ने विधि निषेध के द्वारा (नवधा भक्ति अर्थात् व्रत,उपवास, तीर्थाटन आदि निषेध) अतीत विधान (नवीन शैली) प्रस्तुत कर अपना स्वतंत्र संप्रदाय स्थापित किया और ब्रह्मसूत्रों पर कोई भाष्य नहीं लिखा।''[2]

''इस सम्प्रदाय में 'राधा' 'कृष्ण' के युगल रूप की प्रेमानंदमयी लीलाओं के ध्यान व मनन को परमानंद प्राप्ति का साधन माना गया है। यह सम्प्रदाय वृन्दावन का प्रमुख सम्प्रदाय है। श्री 'कृष्ण' तथा श्री 'राधा' इस सम्प्रदाय के उपास्य हैं। इस सम्प्रदाय में श्री 'राधा' को 'उपास्य' व श्री 'कृष्ण' को 'उपासक' के रूप में स्वीकार किया गया है। इस सम्प्रदाय में गृहस्थ घर में रहकर भी श्री जी के विग्रह (श्री 'कृष्ण' जी की मूर्ति तथा श्री 'राधा' की गादी) की सेवा भोग, स्नान,आरती,सरस पद गान आदि के द्वारा पूरे मनोयोग से करते हैं।

राधावल्लभ सम्प्रदाय में राधा की उपासना का विशेष महत्त्व रहा है। राधावल्लभ सम्प्रदाय में राधा की सर्वोपरिता स्वीकारी गयी है।''[3] ''इस संप्रदाय को जन्म देने वाले महात्मा 'श्री हितहरिवंश' जी को वैष्णव मतानुसार श्री कृष्णचंद्र (श्री कृष्ण) की मुरली का अवतार माना जाता है।''[4] इनकी कविता इतनी सरस तथा स्निग्ध है, इसमें आश्चर्य नहीं कि भक्तों के कर्णकुहरों (कानों में) में वे वंशीनिनाद (मुरली की अत्यन्त आकर्षित करने वाली ध्वनि) के समान ही सुधा रस बरसाती है। सम्भवत: इन्हें श्री वृन्दावन धाम में वंशी का अवतार इस हेतु माना जाता है, क्योंकि इनके द्वारा रचित पदों को श्रवण करने पर मनुष्य को ऐसा प्रतीत होता है, जैसे उसे असीम आनंद की प्राप्ति हो रही हो। जिस प्रकार श्री कृष्ण की मुरली की मधुर तान छिड़ते ही सब सुध-बुध खो कर मधुर भाव रस में खो जाते हैं। उसी प्रकार 'श्री हितहरिवंश' जी द्वारा रचित भावपूर्ण, रससिक्त पदों को सुनकर सामान्य जन स्वत: उससे आकर्षित हो खिचे चले जाते हैं। ''इस सम्प्रदाय में पदों के गेय रूप को 'समाज' कहते हैं और इनका गायन करने वाले गायको को 'समाजी' और इस सम्प्रदाय से जुडे सिद्ध व्यक्तियों को 'रसिक' कहते हैं।'' [5]

''इस सम्प्रदाय को संगीत की दृष्टि से यदि देखा जाए तो 'गोस्वामी हितहरिवंश' जी ने 'समाज संगीत' की अभिनव और मौलिक गायन पद्धति का समुद्भव किया, किन्तु उन्होंने सामवेद के स्वर प्रधान संगीत को अक्षर प्रधान बनाकर इस मौलिक गान पद्धति को जन्म दिया।''[6] राधावल्लभ सम्प्रदाय में 'समाज गायन' पद्धति का उद्देश्य न आत्मकल्याण है, न जनकल्याण, न परकल्याण, न अर्थोपार्जन, न उन्नति और न ही स्वानंद की प्राप्ति व संस्कृति आदि का वर्ण्य है बल्कि यहाँ पर समाजी के भाव ये होते हैं कि राधाकिंकरी (राधाकृष्ण) भावानुभावित (भावविभोर होकर) रसिक की रस लीलाओं के पद्यात्मक गायन द्वारा अपने इष्ट युगल को आनंदित कर सकें तथा स्वयं वृन्दावनरसानंद का अनुभव कर सकें। क्योंकि संगीत को ही वह माध्यम माना जाता है जिससे सबसे

पहले हमारे भाव ईश्वर तक प्रेषित हो जाते हैं, जिसमें कोइ छल, कोइ कर्म-काण्ड की आवश्यकता नहीं होती है। इसी कारण से कई बार समाज गायन में कुछ ही पदों को समाजी घण्टों-घण्टों गाते रह जाते हैं। इसका कारण यही है, कि वे भावविभोर होकर अपनी सुध खोकर श्री राधावल्लभ लाल जू (जी) में खो जाते हैं।

''वृन्दावन के रसरसिकों द्वारा रचित समाज गान पदावली में साधारणीकरण (साधारण रूप से) रूप से की गई एक असाधारण शक्ति है। ठीक उसी तरह से समाज गान में भी साधारणीकरण का अमोद्य (बहुत) सामर्थ्य है। समाज गान में रचित पदावली व गेय पदावली दोनों जब मिल जाते हैं, अर्थात जब पद गायक (समाज गायक) इनका गायन करते हैं, तो इनकी स्वर माधुरी शब्द माधुरी के साथ मिलकर एक चमत्कारिक प्रभाव का अनुभव कराती है। इसीलिए 'हितहरिवंश' जी ने संगीत को अपनी भक्ति का आधार बनाया। राधावल्लभ सम्प्रदाय में रसिक वाणियों का ताल और स्वर के साथ गान होता है। जिनके प्रत्येक अक्षर में वर्ण्य का रूप प्रतिध्वनित और प्रतिबिम्बित होता है। वर्ण्य और स्वर के सामंजस्य से पूर्ण यह मौलिक गान पद्धति रसिक समाज में साधन और साध्य इन दोंनो ही रूपों में अद्भुत सिद्ध हुई है।''[7]

''राधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य हितहरिवंश जी ने दार्शनिक मतवाद की दुरूह जटिलताओं से हटकर राधावल्लभ सम्प्रदाय के पदों को विभिन्न राग-रागिनियों में बद्ध किया है। जिसका गायन करने से इसमें वर्णित प्रेम का उद्रेक स्वत: ही हो जाता है। इसी कारण से समाज गान को इस सम्प्रदाय में अत्यधिक महत्त्व दिया गया है।''[8]

''राधावल्लभ सम्प्रदाय में 'समाज गायन' भक्ति का प्रमुख साधन है, जिसके द्वारा श्री जी की (राधा रानी) सेवा करने का विधान है, चाहे वह नित्य (रोजाना) हो अथवा नैमित्कि (किसी उत्सव विशेष पर होने वाला) हो। जिस प्रकार 'रास' एक सामूहिक नृत्य है, उसी प्रकार 'समाज गान' सामाजिक गायन है। 'समाज' का अर्थ है 'समूह' और 'समाज गान' से तात्पर्य 'सामूहिक गान' से है। यह गायन इतना प्रभावी होता है कि भक्तगण भावाविभोर हो स्वत: गाने लग जाते हैं। 'समाज गान' में मुख्य रूप से एक मुखिया, एक झेला (पंक्ति को दोहराने वाले समाजी), एक पखावज वादक तथा अन्य वाद्ययंत्रों तथा बैठे हुए साथ गाने वाले भक्तगण होते हैं। समाज गायन में लयकारियों, आलाप, तान आदि को कोई स्थान प्राप्त नहीं है। सम्भवत: इसका कारण यह है कि समाज गायन स्वर प्रधान ना होकर शब्द प्रधान है जिसमें शास्त्रीयता (आलाप, तान) के प्रयोग से क्लिष्टता आ जाती व शब्दों के विकृत होने की संभावना रहती है। समाज गायन के साथ संगति के लिए सारंगी, तानपुरा, झांझ और पखावज जैसे परम्परागत वाद्य प्रयुक्त होते हैं। पखावज में लग्गियां बजाई जाती हैं जबकि गायन विलम्बित या मध्य लय में ही किया जाता है, ताकि शब्द स्पष्ट रूप से सुना जा सकें। समाज गायन पद्धति अत्यन्त चित्ताकर्षक स्वरों में महानुभावों द्वारा निर्धारित की गई है। जिनमें से कुछ पद, मिश्रित रागों में व कुछ पद शुद्ध रागों में गाये जाते हैं।'' [9]

## पदों में प्रयुक्त राग

राधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रवर्तक श्री हितहरिवंश व इनके शिष्यों द्वारा रचित पदों में मुख्य रूप से चौदह रागों का प्रयोग किया गया है। इनके अतिरिक्त कई अन्य रागें भी सम्प्रदायिक पदों में प्राप्त होती हैं। वृन्दावन के प्राचीन रसिकों की वाणियों के संग्रह देखने पर हमें यह ज्ञात होता है। उनमें से पदों के कुछ उदाहरण को यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं—

**राग बिलावल—**

*''बरसाने की गोपी मांगन फगुवा आई।*
*कियो है जुहार नंद जू कौं भीतर भवन बुलाई।।''* [10]

**राग तोड़ी—**

*''आजु मेरे कहे चले मृग नैनी।*
*गावत सरस जुवति मंडल में।''* [11]

**राग विभास—**

*''रति रस फाग सबे निसि खेले बहुरि सेज उठि खेलन लागे।*
*सिथिल हुते भूषन पट दृढ करि कच संजम करि आलस त्यागे।।''* [12]

**राग आसावरी—**

*''खेलत रास रसिक मंडल।*
*युवत्नि अंस किये भुज दंडन।।''* [13]

**राग धनाश्री—**

*''मोहन लाल के रस भाती।*
*वधू गुपत प्रथम नेह सकुचाती।।''* [14]

इनके अतिरिक्त राग बसंत, राग देवगंधार, राग सारंग, राग मल्हार, गौड़ मल्हार, गौरी, कल्याण, कान्हरो, केदारो, रायसा व धूलिया राग भी सुनने में आते हैं। ''इस 'समाज' में एक 'रागमाला'' भी एकादशी के अवसर पर गाई जाती है—जिसमें काफी (ताल दीपचंदी), बिहार (धमार), खमाज और शहाना (धमार), कान्हरा (तीनताल), भैरवी और गौरी (तीनताल), बसंत और मालकौंस (सूलताल), मल्हार (ध्रुपद), सिंदूरा (दीपचंदी), बिलावल (दीपचंदी) रागों और तालों का प्रयोग होता है। इनके अतिरिक्त कुछ अप्रचलित रागें भी हमें सम्प्रदायिक ग्रन्थों में प्राप्त होती हैं जैसे—राग जोगिया आसावरी, चैती गौरी, राइसो, रूपक आसावरी, आरसा इत्यादि। इस सम्प्रदाय में प्राप्त कई प्रचलित रागों के नामों में भी कुछ अन्तर प्राप्त होता है। साथ ही कुछ रागों के नाम अवश्य समान प्राप्त होते हैं, किन्तु उनके स्वरूप में अन्तर दृष्टिगत होता है।'' [15]

**पदों में प्रयुक्त ताल—**''समाज गान में ध्रुपद, धमार, दीपचंदी, रूपक, त्रिताल, झपताल, दादरा आदि तालें बजाई जाती है। अधिकतर राधावल्लभ सम्प्रदाय के समाज गान के साथ संगति के रूप में धमार ताल, तीव्रा ताल प्रयोग में ली जाती है। इसमें संगति के रूप में ताल का ठेका उसके प्रकार और गायन के बीच में यदि स्थान मिला तो परन का प्रयोग कर

लिया जाता है। किन्तु वहीं पर किया जाता हैं जहाँ पर इसके प्रयोग से गायन को कोई हानि न होने पाये क्योंकि इस सम्प्रदाय के गुणी जनों का मानना है कि गायन के मध्य इसके प्रयोग से समाज गायकों का ध्यान श्री जी के चरणों से हटकर लयकारियों पर चला जाता है जिससे शुद्ध रस भक्ति की हानि होती है।'' [16]

**सम्प्रदाय में नृत्य विधान—**''राधावल्लभ सम्प्रदाय में नृत्य भी 'समाज' का एक अभिन्न अंग हैं। यह नृत्य राधा-कृष्ण के जन्मोत्सव पर ही किया जाता है और समाज में गाये जाने वाले पदों में वर्णित भावों को विभिन्न भाव-भंगिमाओं द्वारा प्रकट करता हैं। समाज संगीत का यह नृत्य ''ढ़ाढी ढ़ाढ़िन का नृत्य'' के नाम से सम्प्रदाय में जाना जाता है।''[17]

इस सम्प्रदाय में संगीत की तीनों विधाओं का (गायन, वादन, नृत्य) समावेश है यही कारण है कि यह सम्प्रदाय सामान्य जन में अत्यधिक लोकप्रिय है। यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं कि यदि संगीत की परिभाषा (गायन, वादन, तथा नृत्य) को यदि कहीं चरितार्थ होते देखा जाता है तो राधा वल्लभ सम्प्रदाय में। जहाँ कोई छल-कपट नहीं। विशुद्ध रूप से संगीत की अविरल धारा बहती है।

## पाद-टिप्पणियाँ

1. 'सुरस', मुरारीलाल शर्मा, हिन्दी कृष्ण-काव्य परंपरा का स्वरूप-विकास, पृ. सं. 168
2. जोशी, बागेश्री बसंत, ''हिन्दुस्तानी संगीत के विकासक्रम में विष्णुपदों की भूमिका'', भाग-1, पृ. सं. 212
3. पलनीटकर, अलकनंदा, भारतीय संगीत में स्वामी हरिदास का योगदान, पृ. सं. 24
4. साक्षात्कार : खण्डेलवाल, जयेश, रसिक, राधावल्लभ सम्प्रदाय, दिनांक 11.3.2013
5. अली किशोरीकरण, हि. भ. का. में. र. भ. धा. और उ. वा. सा., भाग-1, पृ. सं. 632
6. वही, पृ. सं. 408
7. शोधार्थी के साक्षात् अनुभव के आधार पर
8. गोस्वामी, श्री ललिताचरण, श्री हितहरिवंश गोस्वामी : सम्प्रदाय और साहित्य, वेणु प्रकाशन, वृन्दावन, मथुरा पृ. सं. 316
9. साक्षात्कार : श्री श्यामबिहारी जी, समाज गायक; राधावल्लभ सम्प्रदाय, होलिकोत्सव, दिनांक 3.3.2013
10. राधावल्लभ जी का वर्षोत्व, प्रथम खण्ड, भाग-1, पृ. सं. 169
11. वही, पृ. सं. 233
12. वही, पृ. सं. 169
13. वही, पृ. सं. 169
14. वही, पृ. सं. 233
15. साक्षात्कार : खंडेलवाल, जयेश 'रसिक; राधावल्लभ सम्प्रदाय, राधाष्टमी उत्सव, दिनांक 12.9.2013
16. साक्षात्कार : सुल्तानिया, गोपल, पखावज वादक, राधावल्लभ सम्प्रदाय, दिनांक 19.9.2013
17. मटंगे, छाया, ''म. यु. में. भ. स. एवं द. स. का. वि. अ. (सन् 1100 से 1800 तक), पृ. सं. 45

## सन्दर्भ ग्रन्थ सूची


'अलि', किशोरीशरण, ''हिन्दी भक्ति काव्य में रस भक्ति धारा और उसका वाणी साहित्य'', रस भारती संस्थान, वृन्दावन; प्रथम संस्करण वि सं 2054, राधा प्रेस गांधी नगर, दिल्ली।

गोस्वामी, ललिताचरण, ''श्री राधवल्लभ जी का वर्षोत्सव ब्रज वृन्दावन के प्राचीन रसिकों की वाणीयों का संग्रह'', प्रथम खण्ड भाग 1, श्री राधावल्लभ मंदिर वैष्णव कमेटी, वृन्दावन; तृतीय संस्करण, रंगीली होली, सं. 2066, मेन रोड, वृन्दावन।

'सुरस', मुरारीलाल शर्मा, ''हिन्दी कृष्ण-काव्य परम्परा का स्वरूप-विकास'', प्रेम प्रकाशन मंदिर; प्रथम संस्करण : 1977, दिल्ली।

जोशी, बागेश्री वसंत,''हिन्दुस्तानी संगीत के विकासक्रम में विष्णुपदों की भूमिका '', भाग-1, शोध कार्य : देवी अहल्या बाई विश्वविद्यालय, इंदौर।

पलनीटकर, अलकनंदा,''भारतीय संगीत में स्वामी हरिदास का योगदान'', पूर्वाशा प्रकाशन,भोपाल।

गोस्वामी, श्री ललिताचरण, श्री हितहरिवंश गोस्वामी: सम्प्रदाय और साहित्य, वेणु प्रकाशन, वृन्दावन, मथुरा।

मटंगे,छाया,''मध्य युग में भक्ति संगीत एवं दरबारी संगीत का विश्लेषणात्मक अध्ययन(सन्1100से 1800 तक), शोध कार्य : देवी अहल्या बाई विश्वविद्यालय, इंदौर।

''राधावल्लभ जी का वर्षोत्सव'', प्रथम खण्ड, भाग-1, श्री राधावल्लभ मंदिर वैष्णव कमेटी (रासवश्) वृन्दावन।


## साक्षात्कार


साक्षात्कार: श्यामबिहारी जी, 'समाज गायक; राधावल्लभ सम्प्रदाय, ''होलिकोत्सव'', दिनांक 3.3.2013।

साक्षात्कार खण्डेलवाल, जयेश, 'रसिक; राधावल्लभ सम्प्रदाय, राधाष्टमी उत्सव दिनांक-12.09.2013।

साक्षात्कार सुल्तानिया, गोपल, पखावज वादक; राधावल्लभ सम्प्रदाय, दिनांक 19.9.2013।